आन्ध्र प्रदेश राज्य बनाम पी. सागर

ए.आई.आर. 1968 एस.सी.1379

तथ्य

यह मुकदमा आन्ध्र प्रदेश उच्च न्यायालय द्वारा सागर बनाम आन्ध्र प्रदेश राज्य (ए.आई.आर.1968 ए. पी.165) में दिये गये निर्णय के विरुद्ध अपील में उच्चतम न्यायालय के समक्ष पेश किया गया था जिसमें आन्ध्र प्रदेश सरकार की चिकित्सा संस्थाओं में पिछड़े वर्गों के लिये सीटों का आरक्षण करने वाली जून 1966 की एक अधिसूचना को, जो तेलंगाना क्षेत्र के संबंध में जुलाई 1966 के और आन्ध्र क्षेत्र के संबंध में अगस्त 1966 के आदेश से उपांतरित की गई थी, इस कारण अविधिमान्य ठहरा दिया था कि सूची पूर्णतः जाति के आधार पर तैयार की गयी है।

विवादक

1. क्या पिछड़े वर्गों की पूर्णतः जाति पर आधारित सूची वैध है?

उद्धरण

न्यायमूर्ति शाह

6. जिस संदर्भ में 'वर्ग' शब्द का प्रयोग हुआ है उसमें उसका अर्थ ऐसे व्यक्तियों के सजातीय प्रवर्ग से है जो कतिपय समानताओं या एक सी विशेषताओं के कारण समूहबद्ध हो गए हों अथवा प्रास्थिति, रैंक, उपजीविका ,निवास-स्थान,मूलवंश,धर्म तथा ऐसे ही अन्य गुणों जैसी सामान्य विशेषताओं के आधार पर पहचाने जा सकते हों। इस बात का अवधारण करने में, कि क्या कोई विशेष प्रवर्ग है. जाति को एकदम नहीं छोड़ा जा सकता। किन्तु किसी वर्ग का अवधारण करने की कोई ऐसी कसौटी भी स्वीकार नहीं की जा सकती जो पूर्णतः जाति अथवा समुदाय पर आधारित हो। अनुच्छेद 15 अपने खण्ड (1) द्वारा सरकार को किसी नागरिक से विरुद्ध केवल धर्म,मूलवंश, जाति,लिंग, निवास-स्थान अथवा इनमें से किसी एक के आधार पर भेदभाव बरतने से प्रतिषिद्ध करता है। अनुच्छेद 15 के खण्ड (3) के द्वारा सरकार को खण्ड(1) में अन्तर्विष्ट उपबंध होते हुए भी स्त्रियों और बच्चों के लिये विशेष व्यवस्था करने की अनुमति प्रदान की गई है। खण्ड (4) द्वारा नागरिकों के सामाजिक और शैक्षिक रूप से पिछड़े वर्गों की समुन्नति के लिये अथवा अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लिये की गई कोई विशेष व्यवस्था खण्ड (1) के क्षेत्राधिकार से बाहर हो किन्तु खण्ड (4), खण्ड 1 का अपवाद होने के कारण उसे इतना नहीं बढ़ाया जा सकता कि वह खण्ड (1) में प्रदत्त गारंटी को ही समाप्त कर दे। संसद ने व्यक्तियों के अपेक्षाकृत कमजोर प्रवर्गों की समुन्नति के लिये व्यवस्था किये जाने की अनुज्ञा प्रदान करके तथा खण्ड (4) को

अधिनियमित करके ,नागरिकों के समानता के अधिकार और कमजोर प्रवर्गो की विशेष आवश्यकताओं के मध्य संतुलन कायम करने का प्रयत्न किया है। इस उद्येश्य से कि खण्ड (4) लागू किया जा सके यह स्पष्ट है कि विशेष व्यवस्था के हिताधिकारी सामाजिक और शैक्षिक रूप से पिछड़े वर्ग हैं और वे अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों से भिन्न हैं तथा की गई व्यवस्था उनकी समुन्नति के लिये है। समाज के अपेक्षाकृत कमजोर प्रवर्गों के हितों को अग्रसर करने के लिये आरक्षण को अंगीकार किया जा सकता है किन्तु ऐसा करते समय यह सुनिश्चित किया जाना चाहिए कि पात्र और योग्य उम्मीदवार शिक्षा संस्थानों में प्रवेश पाने से अपवर्जित न हों। पिछड़ेपन का अवधारण करने का मानदण्ड पूर्णतः धर्म, मूलवंश, जाति, लिंग अथवा जन्म स्थान पर आधारित न हो तथा उनका सामाजिक और शैक्षिक पिछड़ापन वैसा ही हो जिससे अनुसूचित जातियां और अनुसूचित जनजातियां पीड़ित रहती है। ये सिद्धांत वे हैं जो एम.आर. बालाजी के मुकदमें में इस न्यायालय के निर्णय में प्रतिपादित किये गये थे।

अनुच्छेद 15(4) के प्रयोजनार्थ पिछड़े वर्गो को अवधारण करने के लिये आंध्र प्रदेश सरकार ने जातियों की 21 जून,1963 की जो सूची तैयार की थी उसे आन्ध्र प्रदेश उच्च न्यायालय में पी. वासुदेव के मुकदमें (1966-I आन्ध्र डब्ल्यू. आर. 294) में अविधिमान्य घोषित कर दिया। संशोधित नियमों के अधीन कुछ उपान्तरणों सहित एक प्रथम सूची प्रकाशित की गई थी किन्तु देखने में उसकी मूल योजना में कोई परिवर्तन नहीं किया गया था । यह सच है कि मुख्य सचिव तथा समाज कल्याण निदेशक ने उच्च न्यायालय में इस आशय के हलफनामे दाखिल किये थे कि उसने उसे प्रस्तुत किये गये अभ्यावेदनों पर विचार किया था, विधि सचिव से परामर्श लिया था, पिछड़े वर्गों के विश्लेषण से संबंधित कतिपय पुस्तकों, यथा-थर्स्टन की पुस्तक ''कास्ट एण्ड ट्राइब्स'' तथा सिराजुल हसन की पुस्तक ''कास्ट्स एण्ड ट्राइब्स'' से सहायता ली थी और अपनी सिफारिशें प्रस्तुत की थी जिन्हें मंत्रिपरिषद द्वारा नियुक्त एक उप समिति ने उपान्तरित कर दिया था और अन्त में मंत्रिपरिषद ने पिछड़े वर्गो की एक अन्तिम सूची तैयार की थी। किन्तु उच्च न्यायालय के समक्ष वह सामग्री पेश नहीं की गई जिस पर मंत्रिमंडलीय उप समिति या मंत्रिपरिषद ने विचार किया था और पिछड़े वर्गो के अवधारण के प्रयोजनार्थ अंगीकृत मानदण्डों के बारे में भी कोई साक्ष्य नहीं दिया गया था। इस संबंध में उच्च न्यायालय ने निम्नलिखित टिप्पणी की-

> ''सरकार की ओर से दाखिल किये गए इस हलफनामें (मुख्य सचिव के) तथा समाज कल्याण निदेशक के हलफनामें के भी परिशीलन से यह पता चलता है कि इनमें इस बारे में कुछ भी नहीं कहा गया है कि मंत्रिमंडलीय उपसमिति अथवा मंत्रिपरिषद् के समक्ष पेश की गई सामग्री क्या थी, जिससे हम निष्कर्ष निकाल सकें कि पिछड़े वर्गों की सूची

तैयार करने में उच्चतम न्यायालय के न्यायमूर्तियों द्वारा निर्धारित मानदण्ड लागू किये गये हैं।'' विधि सचिव की राय और समाज कल्याण निदेशक के विचारों पर ध्यान देने के बाद उन्होंने टिप्पणी की-

'' हम यह अभिनिश्चय करने में असमर्थ हैं कि क्या कोई सामग्री जिसके आधार पर पिछड़े वर्गो की सूची तैयार की गई थी, मंत्रि मंडलीय उप समिति के समक्ष पेश की गई थी, यदि हां तो वह सामग्री कौन सी थी। दूसरी ओर यह भी कहा गया कि विधि सचिव ने विधिक अपेक्षाओं को विनिर्दिष्ट करते हुए तथा समाज कल्याण निदेशक ने वर्ग अथवा वर्गों के सामाजिक एवं शैक्षणिक पिछड़ेपन के संबंध में एक विशेषज्ञ के रूप में सलाह देते हुए एक सूची साथ बैठकर तैयार की थी।''

उच्च न्यायालय के समक्ष एक जोरदार दलील यह पेश की गई कि समाज कल्याण निदेशक और विधि सचिव की विशेज्ञता का लाभ उठाया जाना यह साबित करता है कि उस सूची को तैयार करने में सुसंगत सामग्री पर विचार किया गया था और वे इस बात से संतुष्ट थे कि पिछड़े वर्गों का अवधारण करते समय सही कसौटियां प्रयोग में लाई गई थी और इस कारण से उच्च न्यायालय उक्त सूची को स्वीकार कर ले। उच्च न्यायालय ने इस दलील के संबंध में टिप्पणी की-

".....पिछड़े वर्गों की जिस सूची को चुनौती दी गई है उसके बारे में इस न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत की गई किसी सामग्री के आधार पर सरकार न तो यह कह सकती है और न हीं उसने कहा है कि वह अनुच्छेद 15(4) में उपबंधित अपवाद के अंतर्गत आती है। वास्तव में ऐसी कोई सामग्री हैं हीं नहीं जिसके अगधार पर हम यह कह सकें कि सरकार ने पिछड़े वर्गों की सूची तैयार करते समय उपनिर्दिष्ट मुकदमों में उच्चतम न्यायालय के न्याय मूर्तियों द्वारा प्रतिपादित मानदण्ड लागू किये थे। हम विद्वान महाधिवक्ता के इस तर्क को स्वीकार नहीं कर सकते कि 'एक बार सबूत मिल जाना पर्याप्त होता है कि सरकार ने मामले पर सद्भावनापूर्वक विचार किया था'। इस तर्क को स्वीकार कर लेने का अर्थ मनमानी करना और जिस पक्षकार पर उक्त सूची के उक्त अपवाद के अंतर्गत होने का सबूत देने का भार है उसे सबूत देने से मुक्त करना होगा। यहां यह तथ्य सुसंगत नहीं है कि कार्य सद्भावपूर्वक किया गया था और उसमें कहीं भी असद्भाव नहीं था।''

8. अनुच्छेद 15 का खण्ड (1) एक ऐसे मूल अधिकार की गारंटी प्रदान करता है जिसका जनता के लिये आमतौर पर अत्यधिक महत्व है। कतिपय निर्धारित सीमाओं के भीतर रहते हुए खण्ड

(1) में प्रदत्त स्वतंत्रता की गारंटी पर एक अपवाद का रोपण किया गया है, किन्तु किसी अपवाद के अंतर्गत कार्य करने की स्थिति में उन परिस्थितियों की विधमानता सिद्ध किया जाना बहुत आवश्यक है जो मूल अनुच्छेद के उपबंधों विपणन को न्यायोचित ठहराती है। जब किसी न्यायालय के समक्ष इस संबंध में विवाद उत्पन्न हो गया हो कि भेदभाव के विरुद्ध गारंटी से असंगत कोई विशेष विधि, इस दलील के आधार पर कि उसे अनुच्छेद 15 के खण्ड (4) के अधीन अनुमति प्राप्त है, विधि मान्य है तो सरकार का यह प्राख्यान कि उसके अधिकारियों ने न्यायालयों द्वारा यह अवधारण करने के लिये नागरिकों के सामाजिक और शैक्षिक रूप से पिछड़े वर्ग कौन से हैं अपनाए जाते रहे मानदण्डों पर ध्यान दिया था अथवा यह कि प्राधिकारियों ने नागरिकों के सामाजिक और शैक्षिक रूप से पिछड़े वर्गो का अवधारण करने के लिये सद्भावपूर्वक कार्य किया था, उसके दावे को विधि मान्य ठहराने के लिये पर्याप्त नहीं होगा । इस देश के न्यायालयों में इस देश के नागरिकों तथा अन्य व्यक्तियों के मूल अधिकारों का अतिलंघन करने वाले कानून की विधिमान्यता का अवधारण करने की शक्ति निहित है और जब कोई ऐसा प्रश्न उठ खड़ा होता है कि क्या किसी गारंटीकृत मूलाधिकार का प्रथम दृष्टया अतिलंघन करने वाला कोई कानून अपवाद के अतंर्गत आता है तो उसकी विधिमान्यता का अवधारण भी उन्हें अपने सामने प्रस्तुत की गई सामग्री के आधार पर करना होता है। यह कह देने मात्र से कि कानून उससे संबंधित सुसंगत साक्ष्य और मानदण्डों का पूरा ध्यान रखकर बनाया गया है और यह अपवाद के अतंर्गत आता है, न्यायालय का यह अवधारित करने का क्षेत्राधिकार अपवर्जित नहीं हो जाता कि उक्त कानून बनाने में किसी मूलाधिकार का अतिलंघन हुआ है,या नहीं।

9. उच्च न्यायालय ने अपने निर्णय में बार-बार यह टिप्पणी की है कि उनके समक्ष रिकार्ड में कोई ऐसी सामग्री बिल्कुल भी पेश नहीं की गई है जिसके आधार पर वह निर्णय दे सकें कि यह अवधारण करने के लिये क्या सरकार द्वारा तैयार की गई सूची अनुच्छेद 15 के खण्ड (4) के अपेक्षाओं के अनुसार थी, इस न्यायालय द्वारा निर्धारित मानदण्डों का पालन किया गया था। सरकार की ओर से केवल यह प्रख्यान किया गया है कि विशेषज्ञ अधिकारियों और विधि सचिव की सहायता से वस्तुतः पूछताछ की गई थी और संबंधित राज्य सरकार अधिकारियों मंत्रिमंडलीय उपसमिति और मंत्रीमंडल ने हर दृष्टि से संबंधित प्रश्न की जांच कर ली थी। परन्तु क्या जांच करते समय सही मानदण्ड लागू किये गये थे कोई ऐसी बात नहीं है जिसके बारे में कोई धारणा बनाई जा सके और वह भी तब जब तक कि तैयार की गई सूची स्पष्टतः जातियों और समुदायों पर आधारित हो और सारभूत रूप से वही सूची हो जिसका विखण्डन उक्त उच्च न्यायालय ने पी. वासुदेव के मुकदमे (1966-1 आन्ध्र डब्ल्यू आर. 294) में कर दिया था । जिन व्यक्तियों ने उक्त सूची तैयार और प्रकाशित की थी उनकी प्रयोजन के प्रति ईमानदारी को न तो चुनौती दी जा रही है और न हीं दी गई थी, परन्तु नागरिकों के मूलाधिकारों का प्रकटतः अतिलंघन करने वाले किसी ऐसे कानून की

विधिमान्यता केवल इस कारण से निर्णीत नहीं की जा सकती कि विधि निर्माता इस बारे में संतुष्ट था कि उसने जो कुछ भी किया वह ठीक था अथवा वह यह विश्वास करता है कि उसने नागरिकों को संविधान द्वारा प्रदत्त गारंटियों के संगत ढंग से कार्य किया है । किसी नागरिक के मूलाधिकारों का अतिलंघन करने के लिये अभिकथित किसी कानून अथवा ऐसे कानून के निष्पादन के संबंध में किये गये किसी कार्य की विधिमान्यता की कसौटी विधि निर्माता अथवा विधि का निष्पादन करने वाले किसी व्यक्ति का विश्वास न होकर न्यायालय के समक्ष साक्ष्य और तर्क द्वारा इस बात का प्रदर्शन है कि गारंटीकृत अधिकार का अतिलघंन नहीं किया गया है।

निर्णय

चूंकि उक्त राज्य सरकार ने यह साबित करने के लिये पर्याप्त सामग्री न्यायालय के समक्ष पेश नहीं की थी कि पिछड़े वर्गों की उक्त सूची पूर्णतः जाति के आधार पर तैयार नहीं की गई थी बल्कि सुसंगत कारणों पर पूरा ध्यान दिया गया था, अतः न्यायालय ने आन्ध्र प्रदेश सरकार की अधिसूचना को अविधिमान्य घोषित कर दिया था।